Shodh Sangam Patrika
E-ISSN: 3049-0707, Volume 2 | Issue 3 | (July – Sep 2025)

एम. टी. वासुदेवन नायर का रचनात्मक द्वैत: साहित्य और सिनेमा की संगति

रेमीसा सी. यु.
शोधार्थी, हिंदी विभाग
श्री शंकराचार्य संस्कृत विश्वविध्यालय, केरल

सारांश -

प्रत्येक समाज और प्रत्येक युग की अपनी एक आत्मा होती है-एक अंतर्धारा, जो उसके सामाजिक ताने-बाने, निवासियों की आकांक्षाओं और सामूहिक अवचेतन की गहराइयों से होकर बहती है। इस आत्मा को शब्द देने, उसे आकार प्रदान करने और उसे भविष्य की पीढ़ियों के लिए संरक्षित करने का गुरुतर दायित्व उस युग के महान लेखकों और कलाकारों पर होता है। वे न केवल अपने समय के संवेदनशील द्रष्टा होते हैं, बल्कि मनोवैज्ञानिक और समाजशास्त्री की भूमिका भी निभाते हैं।जब हम बीसवीं सदी के उत्तरार्ध में भारतीय साहित्य के परिदृश्य पर दृष्टि डालते हैं, तो केरल की उर्वर भूमि से एक ऐसा नाम उभरता है, जो इन सभी भूमिकाओं का सफलतापूर्वक निर्वहन करता है-माडथ थेक्केपाट्टु वासुदेवन नायर, जिन्हें साहित्यिक जगत 'एम. टी.' के नाम से जानता है। एम. टी. एक ऐसे साहित्यिक पुरोधा हैं, जिनकी लेखनी ने न केवल मलयालम भाषा को नई ऊँचाइयाँ प्रदान कीं, बल्कि केरल के संक्रमणकालीन समाज के अंतर्मन का ऐसा जीवंत चित्रण प्रस्तुत किया, जो अपनी क्षेत्रीय सीमाओं को लांघकर एक सार्वभौमिक मानवीय अनुभव में रूपांतरित हो गया। उनका कृतित्व एक विशाल वटवृक्ष की भाँति है, जिसकी जड़ें केरल की मिट्टी और मिथकों में गहराई तक धँसी हैं, और जिसकी शाखाएँ मानवीय अस्तित्व के जटिल प्रश्नों को छूने के लिए आकाश की ओर फैली हुई हैं।

मुख्य शब्द – एम.टी वासुदेवन नायर, भारतीय साहित्य, मलयालम साहित्य, सिनेमा, पटकथा, मिथक, मनोविज्ञान, अस्तित्ववाद

प्रस्तावना -

भारतीय साहित्य के विशाल आकाश में एम. टी. वासुदेवन नायर एक ऐसे ध्रुव तारे की तरह हैं, जिन्होंने अपनी लेखनी और सिनेमाई दृष्टि से दशकों तक मलयालम साहित्य और भारतीय सिनेमा को आलोकित किया है। ज्ञानपीठ पुरस्कार से सम्मानित एम. टी. केवल एक लेखक नहीं, बल्कि एक ऐसी संस्था हैं, जिन्होंने केरल के सामाजिक-सांस्कृतिक ताने-बाने को अपनी रचनाओं में गहराई से बुना है। उनके उपन्यास, कहानियाँ, पटकथाएँ और फिल्में मानव-मन की जटिलताओं, टूटते-बिखरते पारिवारिक संबंधों और बदलते सामाजिक परिदृश्य का एक जीवंत दस्तावेज हैं।

माडथ थेक्केपाट्टु वासुदेवन नायर का जन्म 15 जुलाई 1933 को केरल के पालक्काड ज़िले के कुडल्लूर नामक एक छोटे से गाँव में हुआ था। यह गाँव भारतपुषा नदी के तट पर बसा हुआ था, जो बाद में उनकी अनेक रचनाओं की एक सजीव पृष्ठभूमि बना। उनका बचपन एक ऐसे समय में बीता, जब केरल एक बड़े सामाजिक और राजनीतिक परिवर्तन के दौर से गुजर रहा था। सामंतवाद की जड़ें धीरे-धीरे कमजोर हो रही थीं और संयुक्त परिवार (थरवाड़) की व्यवस्था विघटन की ओर अग्रसर थी। इन परिवर्तनों का उनके संवेदनशील मन पर गहरा प्रभाव पड़ा, जो उनकी प्रारंभिक रचनाओं में स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है। अपनी शिक्षा पूर्ण करने के बाद, उन्होंने कुछ समय तक अध्यापन कार्य किया और फिर पत्रकारिता को अपना करियर बनाया। बाद में वे प्रतिष्ठित

मलयालम साप्ताहिक 'मातृभूमि' के संपादक बने। इस पद पर रहते हुए उन्होंने मलयालम साहित्य की कई पीढ़ियों को प्रभावित और प्रेरित किया।

एम. टी. की रचनाओं के विषय विविध हैं, लेकिन कुछ केंद्रीय प्रवृत्तियाँ ऐसी हैं जो उनकी लगभग सभी कृतियों में बार-बार उभरकर सामने आती हैं:

थरवाड़ का विघटन: एम. टी. के लेखन का एक प्रमुख केंद्र बिंदु केरल की मातृसत्तात्मक संयुक्त परिवार व्यवस्था-जिसे थरवाड़ कहा जाता है-का पतन है। उनके उपन्यास और कहानियाँ इन विशाल परिवारों के भीतर व्याप्त तनावों, सत्ता-संघर्षों और व्यक्तिगत आकांक्षाओं के टकराव को सूक्ष्मता से चित्रित करती हैं। 'नालुकेट्टु' (चारदीवारी) और 'असुरविथु' (राक्षसी बीज) जैसे उपन्यास इस विघटन के सजीव और प्रभावशाली चित्र प्रस्तुत करते हैं, जहाँ पारंपरिक मूल्य-व्यवस्था और नई पीढ़ी की महत्वाकांक्षाएँ आपस में टकराती हैं।

अस्तित्ववादी अकेलापन और अलगाव: एम. टी. के पात्र प्रायः समाज और परिवार से कटे हुए, गहरे अकेलेपन से जूझते हुए व्यक्ति होते हैं। वे अपनी जड़ों की तलाश में भटकते हैं, किंतु प्रायः उन्हें निराशा ही हाथ लगती है। उनके नायक पारंपरिक अर्थों में 'हीरो' नहीं होते; वे संवेदनशील, अंतर्मुखी और अक्सर पराजित व्यक्ति होते हैं, जो अपने अस्तित्व का अर्थ खोजने के लिए संघर्षरत रहते हैं। उपन्यास 'कालम' (समय) का नायक सेतु माधवन इस अकेलेपन और भावनात्मक विघटन का उत्कृष्ट उदाहरण है-एक ऐसा पात्र जो जीवन में सफलता तो अर्जित करता है, किंतु भीतर से निरंतर खोखला होता चला जाता है। एमटी एक मनोवैज्ञानिक यथार्थवादी लेखक हैं। वे बाह्य घटनाओं से अधिक पात्रों के आंतरिक जगत, उनकी भावनाओं, कुंठाओं और अनकहे विचारों को चित्रित करने में माहिर हैं। वे अपने पात्रों के मन में उतरकर उनकी चेतना के प्रवाह को पकड़ते हैं, जिससे पाठक उनके सुख-दुख का सीधे अनुभव कर पाता है।

मिथकों का पुनर्पाठ: एमटी की सबसे बड़ी साहित्यिक उपलब्धियों में से एक भारतीय मिथकों और महाकाव्यों का मानवीय दृष्टिकोण से पुनर्पाठ करना है। उन्होंने पौराणिक पात्रों को उनकी दैवीय आभा से निकालकर उन्हें मानवीय कमजोरियों और भावनाओं के साथ प्रस्तुत किया।

लेखन शैली: एमटी की लेखन शैली उनकी सबसे बड़ी पहचान है। उनकी भाषा काव्यात्मक और गीतात्मक है, जिसमें एक अद्भुत प्रवाह और लय है। वे कम शब्दों में गहरी भावनाएं व्यक्त करने की कला में निपुण हैं। वे प्रकृति के चित्र, विशेष रूप से भारतप्पुषा नदी और उसके आसपास के परिदृश्य का उपयोग, पात्रों की मानसिक स्थिति को दर्शाने के लिए एक रूपक के रूप में करते हैं। एमटी अक्सर अपनी कथाओं में कालक्रम को तोड़ते हैं। वे फ्लैशबैक और चेतना-प्रवाह (stream of consciousness) जैसी तकनीकों का उपयोग करके अतीत और वर्तमान को एक साथ बुनते हैं, जिससे कथा को एक नई गहराई मिलती है। उनकी लेखनी बिम्बों और प्रतीकों से समृद्ध है। नदी, पुराना घर, खंडहर, और बदलते मौसम केवल पृष्ठभूमि नहीं हैं, बल्कि कथा के सक्रिय हिस्से हैं जो कहानी के अर्थ को बढ़ाते हैं।

'नालुकेट्टु' (1958) एमटी का पहला प्रमुख उपन्यास है। यह उपन्यास अप्पुण्णि नामक एक लड़के की कहानी है, जो अपने मातृसत्तात्मक थरवाड़ में अपनी पहचान और सम्मान के लिए संघर्ष करता है। "जन्म से पहले ही नालुकेट्टु से निष्कासित किए गए अप्पुण्णि की एकाकी यात्रा ही नालुकेट्टु उपन्यास का केंद्रबिंदु है।"[1] यह उपन्यास सामंती व्यवस्था के पतन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता की तलाश का एक शक्तिशाली आख्यान है। "नालुकेट्टु एक सामजिक इतिहस है। उस इतिहास के कालखंडों के माध्यम से अप्पुण्णि नामक व्यक्ति की शक्ति और कमजोरी एक साथ आगे बढती है – यही दृश्यता नालुकेट्टु को प्रकाशमान बनाती है।"[2]

'असुरविथु' (1962) 'नालुकेट्टु' की दुनिया को आगे बढ़ाता है, लेकिन एक अलग दृष्टिकोण से। इसका नायक, गोविंदनकुट्टी, एक ऐसे समाज में फंसा हुआ है जो उसे स्वीकार नहीं करता है। वह अपने परिवार और समुदाय के पाखंड के खिलाफ विद्रोह करता है, लेकिन अंततः अकेला और पराजित हो जाता है। "असुरविथु की आतंरिक भावना निष्कलंक मानवीयता की नहीं है, यह आलस्य, आत्मकेंदिता और प्रतिशोध की कहानी है। जब मनुष्यों को दफनाया जाता है, तब गोविंदनकुट्टी के भीतर सबसे आगे खड़ी होती है प्रतिशोध कि भावना, प्रेम नहीं है।"[3] यह उपन्यास सामाजिक मानदंडों और व्यक्तिगत पहचान के बीच के संघर्ष का एक मार्मिक चित्रण है। 'कालम' (1969) आधुनिक जीवन की विडंबनाओं पर एक तीखा व्यंग्य है। "आधुनिकता के एक प्रमुख घटक माने जाने वाले अस्तित्ववाद की चिंताओं और उससे जुड़े जटिल तथा व्याकुल जीवनानुभवों को पूरी तरह से केरल के जीवन प्रसंगों से जोड़कर रचित एक महान आख्यान के रूप में एम.टी. की 'कालम' को मूल्यांकित किया जा सकता है।"[4] इसका नायक, सेतु माधवन, गरीबी से निकलकर व्यावसायिक सफलता की ऊंचाइयों तक पहुंचता है, लेकिन इस प्रक्रिया में वह अपने नैतिक मूल्यों, प्रेम और मानवीय संबंधों को खो देता है। "एक आधुनिक पात्र की मानसिक अवस्थाओं से जुड़ा अंतर्मुखता, आत्मकेंद्रिता, संसार से प्रति विद्वेष, व्यक्तिपरकता, मूल्य-निषेध, उदासीनता और समाज से होने वाला अलगाव – इन सभी को प्रकट करने वाला व्यक्तित्व है सेतु का।"[5] यह उपन्यास सफलता की खोखली प्रकृति और आधुनिक व्यक्ति के अलगाव को दर्शाता है। 'रंडामूषम' (1984) व्यापक रूप से एमटी की उत्कृष्ट कृति माना जाता है। यह उपन्यास महाभारत की कहानी को दूसरे पांडव, भीम की आँखों से बताता है। एमटी ने भीम को एक शक्तिशाली योद्धा के साथ-साथ एक संवेदनशील, विचारशील और अक्सर उपेक्षित व्यक्ति के रूप में चित्रित किया है, जो अपने भाइयों के निर्णयों और द्रौपदी के प्रति अपने अनकहे प्रेम के बोझ तले दबा हुआ है। यह उपन्यास मिथक को मानवीय बनाने और सत्ता, धर्म और न्याय के सवालों पर पुनर्विचार करने का एक साहसिक प्रयास है। "गहरे अर्थ से भरपूर संकेतों के माध्यम से बहुस्वरता की वाचन – परतें रचने वाला 'रंडामूषम' केवल भीम को ही नहीं, बल्कि

कुंती, द्रौपदी, युधिष्टिर जैसे अन्य पात्रों के व्यक्तित्वों को भी पुनर्विचार के लिए प्रेरित करता है।"[6] इस उपन्यास के माध्यम से उन्होंने भारतीय साहित्य में मिथकीय पुनर्पाठ की एक नई परंपरा शुरू की। उन्होंने दिखाया कि कैसे हमारे महाकाव्यों को समकालीन संदर्भ में पढ़ा जा सकता है और उनसे नए अर्थ निकाले जा सकते हैं।

एम. टी. वासुदेवन नायर का योगदान साहित्य तक ही सीमित नहीं है; उन्होंने मलयालम सिनेमा पर भी एक अमिट छाप छोड़ी है। "उपन्यास साहित्य में उल्लेखनीय कृतियों के रचयिता एम.टी. वासुदेवन नायर कई पुरस्कार प्राप्त कर चुकी उत्कृष्ट फिल्मों के पटकथा लेखक भी है।"[7] वे भारत के सबसे सफल और सम्मानित पटकथा लेखकों में से एक माने जाते हैं। एमटी ने अपनी कई साहित्यिक कृतियों को स्वयं फिल्मों के लिए रूपांतरित किया। एम.टी. के ही शब्दों में – "प्रकट और मूर्त गति, अदृश्य होते हुए भी संवेदनशील मानसिक गति, शब्द, वाणी, मौन, संगीत और दर्शक को अपने मन की गहराइयों में सृजन की कल्पना करने केलिए छोड़ने वाले अंतराल – इन सभी तत्वों के आधार पर ही स्क्रीनप्ले लेखक कहानी को नए माध्यम में रूपांतरित करता है।"[8] एक पटकथा लेखक के रूप में उनकी सफलता का रहस्य उनकी साहित्यिक संवेदनशीलता और सिनेमाई माध्यम की गहरी समझ का अनूठा संगम था। "एम.टी. की प्रत्येक लघुकथा एक छोटी सी स्क्रीनप्ले (पटकथा) के सामान है।"[9] उनकी पटकथाएँ अपने चुस्त ढांचे, संक्षिप्त और प्रभावशाली संवादों और पात्रों के मनोवैज्ञानिक चित्रण के लिए जानी जाती हैं।

'निर्मालयम' (1973) फिल्म उन्होंने स्वयं निर्देशित की थी और इसने सर्वश्रेष्ठ फीचर फिल्म का राष्ट्रीय पुरस्कार जीता। यह एक मंदिर के पुजारी की कहानी है जो गरीबी और सामाजिक परिवर्तन के कारण अपने विश्वास के संकट से गुजरता है। हरिहरन द्वारा निर्देशित 'ओरु वडक्कन वीरगाथा' (1989) ने कई राष्ट्रीय पुरस्कार जीते। एमटी ने इस फिल्म में उत्तरी केरल की लोककथाओं के एक खलनायक माने जाने वाले चन्तु चेकवर के चरित्र

का पुनर्पाठ किया है। 'सदयं' (1992) एक ऐसे व्यक्ति की मनोवैज्ञानिक खोज है जिसे मौत की सजा सुनाई गई है। यह फिल्म मानवीय मन की अंधेरी गहराइयों का एक परेशान करने वाला लेकिन शक्तिशाली चित्रण है। एम.टी के ही शब्दों में – "नई सिनेमा व्यक्ति की कला है। जैसे कोई व्यक्ति कविता लिखता है, चित्र बनता है, वैसे ही वह सिनेमा का सृजन करता है।"[10]

एमटी ने पटकथा लेखन के अलावा कुछ फिल्मों का निर्देशन भी किया। एक निर्देशक के रूप में, उन्होंने अपनी साहित्यिक दृष्टि को सेल्युलाइड पर उतारा। उनकी फिल्में अक्सर धीमी गति वाली, चिंतनशील और पात्रों के आंतरिक संघर्षों पर केंद्रित होती हैं। 'निर्मालयम' के अलावा, उन्होंने 'बंधनम', 'मंजु' (बर्फ), और 'कदवु' (फेरी) जैसी प्रशंसित फिल्मों का निर्देशन किया। उनकी फिल्में व्यावसायिक सफलता से अधिक अपनी कलात्मक गुणवत्ता के लिए जानी जाती हैं।

वर्त्तमान युग में भी एम. टी. वासुदेवन नायर की प्रासंगिकता कम नहीं हुई है। वे उन मानवीय प्रश्नों से जूझती हैं जो शाश्वत हैं - पहचान का संकट, प्रेम और हानि, अकेलापन, और अस्तित्व का अर्थ। एमटी की रचनाएँ हमें मानवीय संबंधों की जटिलता और गहराई की याद दिलाती हैं। वे हमें परिवार और समुदाय के महत्व को समझाती हैं। वे पर्यावरणीय चेतना से प्रभावित लेखक हैं। उनकी रचनाओं में प्रकृति, विशेषकर भारतप्पुषा नदी, एक महत्वपूर्ण पात्र है। नदी का सूखना और पर्यावरण का क्षरण उनकी कहानियों में सामाजिक और नैतिक पतन का प्रतीक बन जाता है, जो आज के पर्यावरणीय संकट के संदर्भ में और भी अधिक प्रासंगिक है। वैश्वीकरण के इस दौर में जब स्थानीय संस्कृतियाँ खतरे में हैं, एमटी की रचनाएँ केरल की सांस्कृतिक जड़ों और परंपराओं का एक महत्वपूर्ण दस्तावेज हैं। वे हमें अपनी पहचान को समझने और संरक्षित करने के लिए प्रेरित करती हैं।

निष्कर्ष –

एक लेखक, एक पटकथा लेखक, एक फिल्म निर्माता और एक सांस्कृतिक प्रतीक के रूप में, एमटी का योगदान अद्वितीय है। जिन्होंने अपनी कलम और कैमरे से भारतीय साहित्य और सिनेमा को समृद्ध किया है। उन्होंने केरल के एक छोटे से गाँव की कहानियों को विश्व पटल पर पहुंचाया। उनके पात्र, जो अक्सर हारे हुए और अकेले होते हैं, हमें मानवीय स्थिति की सार्वभौमिक सच्चाई का दर्शन कराते हैं। थरवाड़ के विघटन से लेकर महाभारत के पुनर्पाठ तक, उनकी रचनात्मक यात्रा मानव अनुभव की विशालता का एक अन्वेषण है। उन्होंने न केवल मलयालम साहित्य और सिनेमा की दिशा बदली, बल्कि भारतीय कथा साहित्य के लिए भी नए मानक स्थापित किए। उनकी गीतात्मक भाषा, मनोवैज्ञानिक गहराई और मिथकों की साहसिक पुनर्व्याख्या आने वाली पीढ़ियों के लेखकों और फिल्म निर्माताओं को प्रेरित करती रहेगी। एम. टी. वासुदेवन नायर केवल एक व्यक्ति नहीं, बल्कि एक साहित्यिक और सांस्कृतिक आंदोलन का नाम हैं, जिनकी प्रासंगिकता समय के साथ और भी गहरी होती जाएगी। वे वास्तव में भारतीय साहित्य के सही प्रतिनिधि हैं।

संदर्भ सूची –

1. जयकृष्णन, एन, नालुकेट्टू तछु शास्त्रं (2009), केरल भाषा इंस्टिट्यूट, पृ.5
2. वही, पृ.5
3. तरकन, के.एम, मलयाल नॉवल साहित्य चरित्रं (1978), केरला साहित्य अकादेमी, पृ.198
4. कावालम, आनंद, एमटीयुड़े रचनकल ओरु पुनर्वायना (2010), करंट बुक्स थ्रिशुर, पृ.32
5. वही, पृ.32
6. वही, पृ.70
7. वासुदेवन नायर, एम.टी, एमटीयुड़े तिरक्कथकल (1975), डी.सी.बुक्स, पृ.5

8. वही. पृ.7
9. कोषिक्कोडन, एमटीयुड़े सिनेमकल (2007), मातुभूमि बुक्स, पृ.10
10. वासुदेवन नायर, एम.टी , एमटीयुड़े तिरक्कथकल (1975), डी.सी. बुक्स, पृ.6